धोबी घाट पर माँ और मैं -9

“शाम होते-होते हम अपने घर पहुंच चुके थे। कपड़ों के गठर को ईस्तरी करने वाले कमरे में रखने के बाद, हमने हाथ-मुंह धोये और फिर माँ ने कहा कि बेटा चल कुछ खा-पी ले। भूख तो वैसे मुझे कुछ खास लगी नहीं थी (दिमाग में ज़ब सेक्स का भूत सवार हो तो भूख तो वैसे […] …”

Story By: जलगाँव बॉय (Jalgaonboy)
Posted: Tuesday, July 28th, 2015
Categories: माँ की चुदाई
Online version: धोबी घाट पर माँ और मैं -9

Copyright © Antarvasna part of Indian Porn Empire

धोबी घाट पर माँ और मैं -9

शाम होते-होते हम अपने घर पहुंच चुके थे। कपड़ों के गठर को ईस्तरी करने वाले कमरे में रखने के बाद, हमने हाथ-मुंह धोये और फिर माँ ने कहा कि बेटा चल कुछ खा-पी ले।
भूख तो वैसे मुझे कुछ खास लगी नहीं थी (दिमाग में ज़ब सेक्स का भूत सवार हो तो भूख तो वैसे भी मर ज़ाती है) पर फिर भी मैंने अपना सिर सहमति में हिला दिया।
माँ ने अब तक अपने कपड़ों को बदल लिया था, मैंने भी अपने पज़ामे को खोल कर उसकी ज़गह पर लुंगी पहन ली क्योंकि गर्मी के दिनों में लुंगी ज़्यादा आरामदायक होती है।
माँ रसोई घर में चली गई, और मैं कोयले की अंगीठी को ज़लाने के लिये, ईस्तरी करने वाले कमरे में चला गया ताकि ईस्तरी का काम भी कर सकूं।

अंगीठी ज़ला कर मैं रसोई में घुसा तो देखा कि माँ वहीं एक मूढे पर बैठ कर ताज़ी रोटियाँ सेंक रही थी, मुझे देखते ही बोली- ज़ल्दी से आ, दो रोटी खा ले। फिर रात का खाना भी बना दूँगी।
मैं ज़ल्दी से वहीं मूढे पर बैठ गया, सामने माँ ने थोड़ी सी सब्ज़ी और दो रोटियाँ दे दी, मैं चुपचाप खाने लगा।
माँ ने भी अपने लिये थोड़ी सी सब्ज़ी और रोटी निकाल ली और खाने लगी।

रसोई घर में गर्मी काफ़ी थी, इस कारण उसके माथे पर पसीने की बूँदें चुहचुहाने लगी। मैं भी पसीने से नहा गया था।
माँ ने मेरे चेहरे की ओर देखते हुए कहा- बहुत गर्मी है।
मैंने कहा- हाँ!
और अपने पैरों को उठा कर अपनी लुंगी को उठा कर पूरा ज़ांघों के बीच में कर लिया।

माँ मेरी इस हरकत पर मुस्कुराने लगी पर बोली कुछ नहीं। वो चूँकि घुटने मोड़ कर बैठी

थी, इसलिये उसने पेटिकोट को उठा कर घुटनों
तक कर दिया और आराम से खाने लगी।
उसकी गोरी पिन्डलियों और घुटनों का नज़ारा करते हुए मैं भी खाना खाने लगा।
लण्ड की तो यह हालत थी अभी कि माँ को देख लेने भर से उसमें सुरसुरी होने लगती थी।
यहाँ माँ मस्ती में दोनों पैर फैला कर घुटनों से थोड़ा ऊपर तक साड़ी उठा कर दिखा रही थी।

मैंने माँ से कहा- एक रोटी और दे।
'नहीं, अब और नहीं। फिर रात में भी खाना तो खाना है ना ? अच्छी सब्ज़ी बना देती हूँ, अभी हल्का खा ले।'
'क्या माँ, तुम तो पूरा खाने भी नहीं देती। अभी खा लूंगा तो क्या हो ज़ायेगा ?'
'ज़ब ज़िस चीज़ का टाईम हो, तभी वो करना चाहिए। अभी तू हल्क-फुल्का खा ले, रात में पूरा खाना।'
मैं इस पर बड़बड़ाते हुए बोला- सुबह से तो खाली हल्का-फुल्का ही खाये ज़ा रहा हूँ। पूरा खाना तो पता नहीं, कब खाने को मिलेगा ?
यह बात बोलते हुए मेरी नज़रें उसकी दोनों ज़ांघों के बीच में गड़ी हुई थी।

हम दोनों माँ बेटे को शायद द्विअर्थी बातें करने में महारत हासिल हो गई थी। हर बात में दो-दो अर्थ निकल आते थे। माँ भी इसको अच्छी तरह से समझती थी इसलिये मुस्कुराते हुए बोली- एक बार में पूरा पेट भर के खा लेगा, तो फिर चला भी न ज़ायेगा। आराम से धीरे-धीरे खा।
मैं इस पर गहरी सांस लेते हुए बोला- हाँ, अब तो इसी आशा में रात का इन्तज़ार करुँगा कि शायद तब पेट भर खाने को मिल ज़ाये। माँ मेरी तड़प का मज़ा लेते हुए बोली- उम्मीद पर तो दुनिया कायम है। ज़ब इतनी देर तक इन्तेज़ार किया तो थोड़ा और कर ले। आराम से खाना, अपने बाप की तरह ज़ल्दी क्यों करता है ?

मैंने तब तक खाना खत्म कर लिया था और उठ कर लुंगी में हाथ पोंछ कर रसोई से बाहर निकल गया।
माँ ने भी खाना खत्म कर लिया था।

मैं ईस्तरी वाले कमरे आ गया और देखा कि अंगीठी पूरी लाल हो चुकी है।
मैंने ईस्तरी गरम करने को डाल दी और अपनी लुंगी को मोड़ कर घुटनों के ऊपर तक कर लिया। बनियान भी मैंने उतार दी और
ईस्तरी करने के काम में लग गया।
हालांकि मेरा मन अभी भी रसोईघर में ही अटका पर था और ज़ी कर रहा था कि मैं माँ के आस पास ही मंडराता रहूँ।
मगर क्या कर सकता था, काम तो करना ही था।

थोड़ी देर तक रसोईघर में खटपट की आवाज़ें आती रही, मेरा ध्यान अभी भी रसोई-घर की तरफ ही था। पूरे वातावरण में ऐसा लगता था कि एक अज़ीब सी खुशबू समाई हुई है।
आँखों के आगे बार बार वही माँ की चूचियों को मसलने वाला दृश्य तैर रहा था। हाथों में अभी भी उसका अहसास बाकी था।
हाथ तो मेरे कपड़ों को ईस्तरी कर रहे थे, परंतु दिमाग में दिनभर की घटनायें घूम रही थी।
मेरा मन तो काम करने में नहीं लग रहा था, पर क्या करता।

तभी माँ के कदमों की आहट सुनाई दी, मैंने मुड़ कर देखा तो पाया कि माँ मेरे पास ही आ रही थी। उसके हाथ में हांसिया (सब्ज़ी काटने के लिये गांव में इस्तेमाल होने वाली चीज़) और सब्ज़ी का टोकरा था।

मैंने माँ की ओर देखा, वो मेरी ओर देख के मुस्कुराते हुए वहीं पर बैठ गई, फिर उसने पूछा-
कौन-सी सब्ज़ी खायेगा ?
मैंने कहा- ज़ो सब्ज़ी तुम बना दोगी, वही खा लूँगा।

इस पर माँ ने फिर ज़ोर दे के पूछा- अरे बता तो, आज़ सारी चीज़ तेरी पसंद की बनाती हूँ। तेरा बापू तो आज़ है नहीं, तेरी ही पसंद का तो ख्याल रखना है।
तब मैंने कहा- ज़ब बापू नहीं है तो फिर आज़ केले या बैंगन की सब्ज़ी बना ले। हम दोनों वही खा लेंगे। तुझे भी तो पसंद है इसकी सब्ज़ी।
माँ ने मुस्कुराते हुए कहा- चल ठीक है, वही बना देती हूँ।
और वहीं बैठ कर सब्जियाँ काटने लगी।
सब्ज़ी काटने के लिये ज़ब वो बैठी थी तब उसने अपना एक पैर मोड़ कर ज़मीन पर रख दिया था और दूसरा पैर मोड़ कर अपनी छाती से टिका रखा था और गर्दन झुकाये सब्जियां काट रही थी।
उसके इस तरह से बैठने के कारण उसकी एक चूची ज़ो उसके एक घुटने से दब रही थी, ब्लाउज से बाहर निकलने लगी और ऊपर से झांकने लगी। गोरी-गोरी चूची और उस पर की नीली-नीली रेखायें, सब नुमाया हो रहा था।

मेरी नज़र तो वहीं पर ज़ाकर ठहर गई थी।
माँ ने मुझे देखा, हम दोनों की नज़रें आपस में मिली और मैंने झेंप कर अपनी नज़र नीचे कर ली और ईस्तरी करने लगा।
इस पर माँ ने हसते हुए कहा- चोरी-चोरी देखने की आदत गई नहीं। दिन में इतना सब कुछ हो गया, अब भी ??
मैंने कुछ नहीं कहा और अपने काम में लगा रहा।

तभी माँ ने सब्ज़ी काटना बंद कर दिया और उठ कर खड़ी हो गई और बोली- खाना बना देती हूँ, तू तब तक छत पर बिछावन लगा दे। बड़ी गर्मी है आज़ तो, ईस्तरी छोड़, कल सुबह उठ के कर लेना।
मैंने कहा- बस थोड़ा सा और कर लूँ, फिर बाकी तो कल ही करूँगा।
मैं ईस्तरी करने में लग गया और रसोई घर से फिर खट-पट की आवाज़ें आने लगी।

यानि की माँ ने खाना बनाना शुरु कर दिया था। मैंने ज़ल्दी-से कुछ कपड़ों को ईस्तरी की, फिर अंगीठी बुझाई और अपने तौलिये से पसीना पोंछता हुआ बाहर निकल आया, हेन्डपम्प के ठंडे पानी से अपने मुंह हाथों को धोने के बाद मैंने बिछावन लिया और छत पर चल गया।
और दिन तो तीन लोगों का बिछावन लगता था, पर आज़ तो दो का ही लगाना था। मैंने वहीं ज़मीन पर पहले चटाई बिछाई, और फिर दो लोगों के लिये बिछावन लगा कर नीचे आ गया।

माँ अभी भी रसोई में ही थी। मैं भी रसोईघर में घुस गया। माँ ने साड़ी उतार दी थी और अब वो केवल पेटिकोट और ब्लाउज़ में ही खाना बना रही थी।
उसने अपने कंधे पर एक छोटा-सा तौलिया रख लिया था और उसी से अपने माथे का पसीना पोंछ रही थी।
मैं ज़ब वहाँ पहुँचा, तो माँ सब्ज़ी को कलछी से चला रही थी और दूसरी तरफ रोटियाँ भी सेक रही थी।

मैंने कहा- कौन-सी सब्ज़ी बना रही हो, केले या बैंगन की ?
माँ ने कहा- खुद ही देख ले, कौन सी है ?
'खुशबू तो बड़ी अच्छी आ रही है। ओह, लगता है दो दो सब्ज़ी बनी है।'
'खा के बताना, कैसी बनी है ?'
'ठीक है माँ, बता और कुछ तो नहीं करना ?' कहते कहते मैं एकदम माँ के पास आकर बैठ गया था।

माँ मूढे पर अपने पैरों को मोड़ कर और अपने पेटिकोट को ज़ांघों के बीच समेट कर बैठी थी। उसके बदन से पसीने की अज़ीब सी खुशबू आ रही थी।
मेरा पूरा ध्यान उसकी ज़ांघों पर ही चला गया था।

माँ ने मेरी ओर देखते हुए कहा- ज़रा खीरा काट के सलाद भी बना ले।
'वाह माँ, आज़ तो लगता है, तू सारी ठंडी चीज़ें ही खायेगी ?'
'हाँ, आज़ सारी गर्मी उतार दूँगी मैं।'

'ठीक है माँ, ज़ल्दी से खाना खाकर छत पर चलते हैं, बड़ी अच्छी हवा चल रही है।'

माँ ने ज़ल्दी-से थाली निकली, सब्ज़ी वाले चूल्हे को बंद कर दिया। अब बस एक या दो रोटियाँ ही बची थी, उसने ज़ल्दी-ज़ल्दी हाथ चलाना शुरु कर दिया।
मैंने भी खीरा और टमाटर काट कर सलाद बना लिया।

माँ ने रोटी बनाना खत्म कर के कहा- चल खाना लगा देती हूँ। बाहर आंगन में मूढे पर बैठ के खायेंगे।
मैंने दोनों परोसी हुई थालियां उठाई और आंगन में आ गया।
माँ वहीं आंगन में एक कोने पर अपना हाथ मुंह धोने लगी। फिर अपने छोटे तौलिये से पोंछते हुए मेरे सामने रखे मूढे पर आकर बैठ
गई।
हम दोनों ने खाना शुरु कर दिया।
मेरी नज़रें माँ को ऊपर से नीचे तक घूर रही थी। माँ ने फिर से अपने पेटिकोट को अपने घुटनों के बीच में समेट लिया था और इस
बार शायद पेटिकोट कुछ ज़्यादा ही ऊपर उठा दिया था। चूचियाँ एकदम मेरे सामने तन के खड़ी-खड़ी दिख रही थी।
बिना ब्रा के भी माँ की चूचियाँ ऐसी तनी रहती थी, ज़ैसे कि दोनों तरफ दो नारियल लगा दिये गये हो।
इतनी उमर बीत ज़ाने के बाद भी जरा सा भी ढलकाव नहीं था। ज़ांघें बिना किसी रोयें के एकदम चिकनी, गोरी और माँसल थी।

पेट पर ऊमर के साथ थोड़ा सा मोटापा आ गया था।

ज़िसके कारण पेट में एक-दो फोल्ड पड़ने लगे थे ज़ो देखने में और ज़्यादा सुंदर लगते थे।
आज़ पेटिकोट भी नाभि के नीचे बांधा गया था।
इस कारण से उसकी गहरी गोल नाभि भी नज़र आ रही थी। थोड़ी देर बैठने के बाद ही माँ को पसीना आने लगा और उसकी गर्दन से
पसीना लुढ़क कर उसके ब्लाउज़ के बीच वाली घाटी में उतरता ज़ा रहा था।
वहाँ से वो पसीना लुढ़क कर उसके पेट पर भी एक लकीर बना रहा था और धीरे धीरे उसकी गहरी नाभि में ज़मा हो रहा था।
मैं इन सब चीज़ों को बड़े गौर से देख रहा था।
यह कहानी आप अन्तर्वासना डॉट कॉम पर पढ़ रहे हैं !

माँ ने ज़ब मुझे ऐसे घूरते हुए देखा तो हंसते हुए बोली- चुपचाप ध्यान लगा कर खाना खा, समझा !!
और फिर अपने छोटे वाले तौलिये से अपना पसीना पोंछने लगी।
मैं खाना खाने लगा और बोला- माँ, सब्ज़ी तो बहुत ही अच्छी बनी है।
'चल तुझे पसंद आई, यही बहुत बड़ी बात है मेरे लिये। नहीं तो आज़कल के लड़कों को घर का कुछ भी पसंद ही नहीं आता।'
'नहीं माँ, ऐसी बात नहीं है, मुझे तो घर का 'माल' ही पसंद है।'
यह 'माल' शब्द मैंने बड़े धीमे स्वर में कहा था कि कहीं माँ ना सुन ले।

माँ को लगा कि शायद मैंने बोला है, घर की दाल, इसलिये वो बोली- मैं ज़ानती हूँ, मेरा बेटा बहुत समझदार है, और वो घर के दाल चावल से काम चला सकता है। उसको बाहर के 'मालपुए' (एक प्रकार की खाने वाली चीज़, ज़ो मैदे और चीनी से बनाई ज़ाती है) से कोई मतलब नहीं है।

माँ ने मालपुआ शब्द पर शायद ज़्यादा ही ज़ोर दिया था, और मैंने इस शब्द को पकड़ लिया, मैंने कहा- पर माँ, तुझे मालपुआ बनाये काफ़ी दिन हो गये। कल मालपुआ बना ना ?
'मालपुआ तुझे बहुत अच्छा लगता है, मुझे पता है। मगर इधर इतना टाईम कहां मिलता था, ज़ो मालपुआ बना सकूँ ? पर अब मुझे लगता है, तुझे मालपुआ खिलाना ही पड़ेगा।'

मैंने कहा- ज़ल्दी खिलाना, माँ।
और हाथ धोने के लिये उठ गया।
माँ भी हाथ धोने के लिये उठ गई।

हाथ मुंह धोने के बाद माँ फिर रसोई में चली गई और बिखरे पड़े सामान को सन्भालने लगी।
मैंने कहा- छोड़ो ना माँ, चलो सोने ज़ल्दी से। यहाँ बहुत गर्मी लग रही है।
'तू ज़ा ना, मैं अभी आती हूँ, रसोईघर गंदा छोड़ना अच्छी बात नहीं है।'

मुझे तो ज़ल्दी से माँ के साथ सोने की हड़बड़ी थी कि कैसे माँ से चिपक के उसके माँसल बदन का रस ले सकूँ। पर माँ रसोई साफ करने में ज़ुटी हुई थी, मैंने भी रसोई का सामान सम्भालने में उसकी मदद करनी शुरु कर दी।
कुछ ही देर में सारा सामान ज़ब ठीक ठाक हो गया तो हम दोनों रसोई से बाहर निकले !
मित्रो, कहानी पूरी तरहा काल्पनिक है। आप मुझे मेल ज़रूर करें, ख़ास कर महिलायें अपने विचार ज़रूर बतायें।
कहानी ज़ारी रहेगी।
jalgaon.boy.jb@gmail.com

Other stories you may be interested in

खड़े लण्ड की अजीब दास्ताँ-1

आदाब दोस्तो ! मैं आमिर एक बार फिर से आपके लिए अपनी गर्म कहानी लेकर आया हूं. इस कहानी को शुरू करने से पहले मैं आपको अपनी पिछली कहानी के बारे में संक्षिप्त जानकारी देना चाहूंगा ताकि आप इस कहानी को […]
Full Story >>>

शहरी लंड की प्यास गांव की भाभी ने बुझायी

दोस्तो नमस्कार ! मैं राज शर्मा चंडीगढ़ से ! एक बार फिर आप सभी के सामने अपनी एक नई कहानी को लेकर हाजिर हूं। आप सभी ने मेरी पिछली कहानियां पढ़ कर मुझे बहुत मेल व सुझाव दिए, उसके लिए आप सभी […]
Full Story >>>

पहला नशा पहला मज़ा-2

मेरी सेक्स कहानी के पिछले भाग पहला नशा पहला मज़ा-1 अब तक आपने पढ़ा कि मेरी सहेली नीना और उसकी बड़ी बहन सरिता, दोनों बहनें अपनी जवानी की आग को अपने बाप से चटवा कर या उंगली करवा कर शांत […]
Full Story >>>

एक और अहिल्या-10

मैंने महसूस किया कि मेरे ज्यादा नर्मी दिखाने की वजह से वसुन्धरा मुझ पर हावी होने की कोशिश कर रही थी. यह तो सरासर मेरे पौरूष को खुली चुनौती थी और ऐसा तो मैं होने नहीं दे सकता था. मैंने […]
Full Story >>>

बैंक की नौकरी के लिए मेरा गैंगबैंग

सभी पाठकों को मेरा नमस्कार. यह मेरी पहली सेक्स कहानी है, जो आज से 3 साल पहले की है. सबसे पहले मेरा परिचय आपको दे रही हूँ. मेरा नाम प्रिया गँगवार है और मैं 24 साल की हूँ. मैं झाँसी […]
Full Story >>>